

अध्याय -10

प्राकृतिक आपदाएँ व प्रबंधन (भूकम्प व भूस्खलन)

(Natural Disasters and Management)
(Earthquakes & Land slides)**प्राकृतिक आपदाएँ**

परिवर्तन लगातार होने वाली क्रिया है। परिवर्तन प्रकृति में भी सदैव होते रहते हैं। जिन परिवर्तनों का प्रभाव मानव के हित में होता है उन्हें प्रकृति का वरदान कहा जाता है। लेकिन जब परिवर्तनों का प्रभाव मानव समाज का अहित करता है तो इन्हें प्राकृतिक आपदा कहा जाता है। जैसे – जब वर्षा समयानुसार व मानव की आवश्यकतानुसार होती है तो मानव उसे वरदान मानता है। जब वर्षा अत्यधिक मात्रा में होती है तो वह बाढ़ के रूप में प्राकृतिक आपदा बन जाती है जिसे अतिवृष्टि भी कहा जाता है और यदि बहुत कम वर्षा हो तो वही अनावृष्टि के रूप में प्राकृतिक आपदा बन जाती है। जिन प्राकृतिक परिवर्तनों का दुष्प्रभाव मानव समाज पर पड़ता है उन्हें प्राकृतिक आपदाएँ कहते हैं।

प्राकृतिक आपदा तथा संकट

प्राकृतिक आपदा तथा संकट में बहुत बारीक अन्तर है। प्राकृतिक आपदा प्रकृति में कुछ ही समय में घट जाने वाली घटना या परिवर्तन है। ऐसी घटनाओं के घट जाने के बाद मानव समाज को जिन समस्याओं का सामना करना पड़ता है वे समस्याएँ संकट मानी जाती हैं।

फ्रेंच भाषा में Dis का अर्थ बुरा (Bad) तथा Aster का अर्थ सितारे से है। अतः Disaster का अर्थ है सितारे बुरे होना। प्राकृतिक आपदाओं (Disaster) को प्राकृतिक संकट (Hazards) भी कहा जाता है। भारत में प्राकृतिक आपदाओं को प्रकृति का प्रकोप भी कहते हैं। प्राकृतिक आपदाओं के कारण ही संकट व समस्याओं की स्थिति बनती है। प्राचीन काल में प्राकृतिक आपदाओं को प्रकृति के साथ की गई छेड़-छाड़ के लिए प्रकृति द्वारा दिया गया दंड माना जाता था।

प्राकृतिक आपदाओं की उत्पत्ति के कारण

किसी प्राकृतिक आपदा की उत्पत्ति के लिए कौन सा कारण

जिम्मेदार है, इसे निर्धारित करना बहुत कठिन है। किसी भी प्राकृतिक आपदा के लिए एक नहीं अनेक कारण संयुक्त रूप से जिम्मेदार होते हैं। पृथ्वी की आन्तरिक एवं बाह्य शक्तियों का प्रभाव कुछ आपदाओं को सीधे प्रभावित करता है जैसे, भूकम्प व ज्वालामुखी। मानव ने प्राकृतिक संसाधनों का अविवेकपूर्ण विदोहन अनवरत जारी रखा है। बढ़ती जनसंख्या की मांगों की पूर्ति हेतु भूमि उपयोग के स्वरूप को विकृत किया है। फलस्वरूप वनों का विनाश, भूमि का क्षरण व जल संकट जैसी समस्याओं ने पर्यावरण को संकट में डाल दिया है। इससे ग्लोबल वार्मिंग की समस्या पैदा होती जा रही है, जो कहीं न कहीं अतिवृष्टि व अनावृष्टि जैसी आपदाओं को उत्पन्न कर रही है। भूस्खलन व समुद्री तूफान जैसी प्राकृतिक आपदाएँ भारत में भी बढ़ती जा रही हैं। मानव का उपभोक्तावादी दृष्टिकोण अन्धाधुन्ध विकास के लिए प्राकृतिक संतुलन को बिगाड़ रहा है। मानव के ये कार्य प्राकृतिक आपदाओं को अप्रत्यक्ष रूप से आमंत्रण दे रहे हैं।

प्राकृतिक आपदाओं का वर्गीकरण

उत्पत्ति के आधार पर प्राकृतिक आपदाओं का वर्गीकरण निम्नलिखित रूप में किया जा सकता है –

- 1. मौसमी आपदाएँ** – इनमें वे प्राकृतिक आपदाएँ सम्मिलित की जाती हैं जो मौसमी परिवर्तन के कारण उत्पन्न होती हैं, जैसे – चक्रवात, अतिवृष्टि, अनावृष्टि व हिमपात।
- 2. स्थलाकृतिक आपदाएँ** – इनमें वे प्राकृतिक आपदाएँ सम्मिलित की जाती हैं जो स्थलाकृतिक स्वरूप में अचानक परिवर्तन होने से उत्पन्न होती हैं, जैसे – भूस्खलन, हिमस्खलन, भूकम्प व ज्वालामुखी। भारत में ज्वालामुखी सक्रिय नहीं है।
- 3. जीवों द्वारा उत्पन्न आपदाएँ** – इनमें वे प्राकृतिक आपदाएँ सम्मिलित की जाती हैं जो जीवों व जीवाणुओं द्वारा उत्पन्न होती हैं, जैसे – टिड्डी दल

का आक्रमण, महामारियाँ, मृत पशु, प्लेग, मलेरिया इत्यादि।

प्राकृतिक आपदाएँ व प्रबन्धन

प्रबन्धन वे कार्य हैं जो आपदा व संकट के निवारण हेतु किये जाते हैं। प्राकृतिक आपदाओं से जो संकट की घड़ी आती है उसका मुकाबला करने के लिए देश व समाज को प्रबन्धन के क्षेत्र में बहुत जिम्मेदारी व ईमानदारी से हिस्सा लेना होता है। प्रबन्धन से आशय है, संकट से राहत पाने के लिए प्रत्येक स्तर पर जो जिम्मेदारियाँ निर्धारित हैं उसके अनुसार समयबद्ध कर्तव्य का पालन किया जाना। देश व समाज के चरित्र का परिचय प्राकृतिक आपदा के बाद मानव सेवा में उनके द्वारा किये गये कार्यों से मिलता है। प्रबन्धन को निम्नलिखित कारक प्रभावित करते हैं -

1. आर्थिक स्थिति
2. व्यक्ति की सकारात्मक सोच
3. सहयोग की भावना
4. सामाजिक ईमानदारी व निष्ठा
5. भौगोलिक परिस्थितियाँ
6. परिवहन व संचार के साधनों की स्थिति
7. जनसंख्या घनत्व

भूकम्प

पृथ्वी के आन्तरिक भाग में होने वाली किसी घटना से जब पृथ्वी के किसी भाग में कम्पन होता है तो उसे भूकम्प कहते हैं। साधारण शब्दों में पृथ्वी के किसी भाग के कम्पन को भूकम्प कहते हैं। भूकम्प प्राकृतिक आपदाओं में बहुत विनाशकारी आपदा है। इसमें कुछ ही क्षणों में विनाशकारी परिवर्तन हो जाते हैं। भू-सतह पर भूकम्प की तरंगों से कम्पन के साथ-साथ ऐसा लगता है जैसे पैरों के नीचे जमीन हिल रही है।

भूकम्प की तीव्रता सीस्मोग्राफ यंत्र के द्वारा मापी जाती है। सिस्मोग्राफ भूकम्प की तरंगों को निरन्तर अंकन करता रहता है। तरंगों की तीव्रता को रिक्टर पैमाने पर मापा जाता है। इस पैमाने को चार्ल्स रिक्टर ने विकसित किया था। उन्हीं के नाम पर इसे रिक्टर पैमाना कहा जाता है। रिक्टर पैमाने पर भूकम्प की तीव्रता 1 से 12 तक मापी जाती है। रिक्टर पैमाने पर भूकम्प की तरंगों की तीव्रता 5 तक मापी जाये तो इसे सामान्य भूकम्प कहा जाता है। जैसे-जैसे तीव्रता की संख्या बढ़ती जाती है, भूकम्प महाविनाशकारी रूप लेता जाता है।

भूकम्प उत्पत्ति के कारण

भूकम्प मुख्यतः पृथ्वी की विवर्तनिक गतियों के कारण उत्पन्न होते हैं। विवर्तनिक गतियों में प्लेटों का प्रवाह भूकम्प का कारण बनता

सारणी - 10.1

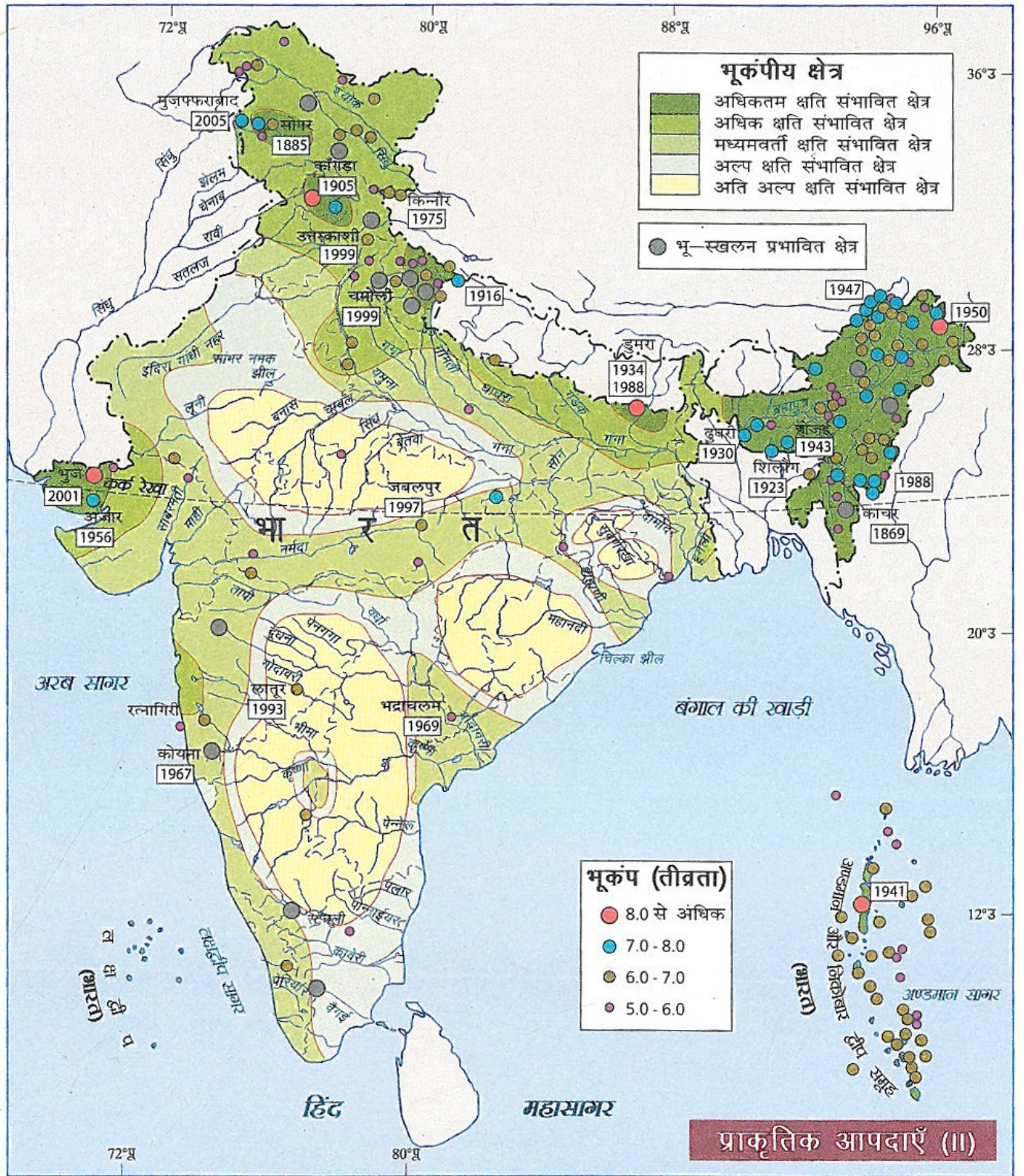
भारत में आए प्रमुख भूकम्प

तिथि	अधिकेंद्र		स्थान	तीव्रता
	अक्षांश (अंश उ.)	देशांतर (अंश पू.)		
06-08-1988	25.13	95.15	मणिपुर-म्यांमार सीमा	6.6
21-08-1988	26.72	86.63	बिहार-नेपाल सीमा	6.4
20-10-1991	30.75	78.86	उत्तरकाशी, उत्तराखण्ड पहाड़ियाँ	6.6
30-09-1993	18.07	76.62	लातूर-ओस्मानाबाद, महाराष्ट्र	6.3
22-05-1997	23.08	80.06	जबलपुर, मध्य प्रदेश	6.0
29-03-1999	30.41	79.42	चमोली, उत्तराखण्ड	6.8
26-01-2001	23.40	70.28	भुज, गुजरात	6.9
08-10-2005	34.24	73.22	मुजफ्फराबाद, जम्मू और कश्मीर	7.6

है। इसका सबसे नवीन उदाहरण 26 दिसम्बर 2004 को दक्षिणी-पूर्वी एशिया में आया भूकम्प है जिसमें भारतीय प्लेट उत्तर की ओर प्रवाहित हुई थी। पृथ्वी पर संतुलन की प्रक्रिया के निरन्तर जारी रहने से भी भूकम्प की उत्पत्ति होती है। इस प्रक्रिया में भूपटल पर भ्रंश व उत्थान होते रहते हैं। पृथ्वी से निरन्तर निकलने वाली उष्मा से उसमें संकुचन होता है। हालांकि यह प्रक्रिया बहुत लम्बे काल तक चलती है पर यह संकुचन भी भूकम्प की उत्पत्ति का कारण बनता है। खनिजों के अविवेकपूर्ण दोहन व कमजोर भूपटल वाले क्षेत्रों में बड़े-बड़े बांधों का निर्माण भी मानवीय क्रियाओं द्वारा भूकम्प की उत्पत्ति का कारण बनते हैं।

भूकम्प प्रवृत्त क्षेत्र

भारत में भूकम्प प्रवृत्त क्षेत्रों का निर्धारण बहुत सरल माना गया था। लेकिन 30 सितम्बर 1993 को लातूर में आये भूकम्प के बाद भारत में भूकम्प प्रभावित क्षेत्रों पर नये सिरे से विचार किया गया। भारत में आए प्रमुख भू-कम्पों की सारणी को देखा जाये तो ज्ञात होता है कि उत्तरी पर्वतीय क्षेत्र व उसकी तलहटी में सर्वाधिक भूकम्प आए हैं। हिमालय नवीन मोड़दार पर्वत है जो अभी भी उत्थान की अवस्था में है। हिमालय क्षेत्र में अभी भी संतुलन की स्थिति उत्पन्न नहीं हुई है, अतः इस क्षेत्र में भूकम्प सर्वाधिक आते हैं। उत्तरी मैदानी क्षेत्र में कम शक्ति के भूकम्प आते हैं व उनकी संख्या भी अपेक्षाकृत कम है। प्रायद्वीपीय पठार को स्थिर भूभाग माना जाता रहा है लेकिन कोयना व लातूर के भूकम्पों के बाद इस क्षेत्र को भी भूकम्प क्षेत्र माना गया है। भारतीय प्लेट के निरन्तर उत्तर की ओर प्रवाह के कारण भी इन क्षेत्रों में भूकम्प आते हैं। भारत में आए लगभग 1200 भूकम्पों का अध्ययन कर भारत को तीन भूकम्प क्षेत्रों में विभक्त किया गया है। इन भूकम्प प्रवृत्त क्षेत्रों को चित्र संख्या 10.1 में दर्शाया गया है।



चित्र 10.1 - भारत : भूकम्प प्रवृत्त क्षेत्र

भूकम्प – एक संकट

भूकम्प एक ऐसी प्राकृतिक आपदा है जो कुछ ही क्षणों में विनाशकारी परिवर्तनों का ऐसा स्वरूप मानव समाज के सम्मुख उपस्थित कर देती है कि हृदय दहल जाता है। भूकम्प आने से हजारों जानें काल की ग्रास बन जाती हैं, भवन रेत के ढेर की तरह भरभरा कर गिर जाते हैं, आवागमन के मार्ग टूट जाते हैं, नहरों, पुलों व बांधों को क्षति पहुँचती है, पृथ्वी सतह पर दरारें पड़ जाती हैं, भूकम्प से भूस्खलन होने पर नदियों के मार्ग बदल जाते हैं व कई जगह झीलें भी बन जाती हैं। ये भविष्य में खतरे का सबब बनती हैं, जिनसे बाढ़ का खतरा बना रहता है।

11 अक्टूबर 1737 को कोलकाता में आए भूकम्प से लगभग 3 लाख व्यक्ति मारे गये थे। 30 मई 1885 को कश्मीर क्षेत्र में आए भूकम्प से भूस्खलन के कारण हजारों व्यक्ति मारे गये थे व हजारों बेघर हो गए। 11 दिसम्बर 1967 को भूकम्प के कारण कोयना बांध टूटने से मोरवीनगर नष्ट हो गया। 26 दिसम्बर 2004 को दक्षिणी पूर्वी एशिया में जावा के पास आए भूकम्प के कारण समुद्र में जो सुनामी लहरें पैदा हुई उससे हजारों किलोमीटर दूर भारत के तटीय क्षेत्रों में विनाश हुआ जिससे लगभग 5000 व्यक्ति इन लहरों के ग्रास बन गये।

संकट से बचाव व प्रबन्धन

1. सरकारी व सामाजिक स्तर पर – प्राकृतिक आपदाओं से पैदा होने वाले संकटों पर सभी सरकारें तत्काल राहत व सहायता उपलब्ध करवाती हैं। भारत जैसे देश में जहाँ जनसंख्या घनत्व अधिक है जनहानि अधिक होती है व उसकी संभावना भी बनी रहती है। अतः आवश्यक है कि देश में भूकम्प लेखी यंत्रों का जाल बिछा दिया जाये ताकि भूगर्भ में होने वाली हलचलों का ज्ञान होता रहे। जब कभी तीव्र गति के भूकम्प आने की संभावना बने तो क्षेत्र विशेष के लोगों को प्रचार माध्यमों के द्वारा सजग कर दिया जाये।

2. व्यक्तिगत स्तर पर – व्यक्ति को जब भी भूकम्प आने का अहसास होने लगे तो उसे तत्काल कुछ निर्णय लेने चाहिए जैसे – सभी को घर से बाहर खुली जगहों पर जाने को कहना, यदि बाहर जाना सम्भव न हो तो दरवाजों के मध्य में खड़े हो जाना चाहिए। बिजली बंद कर देनी चाहिए। गैस बंद कर देनी चाहिए। पालतू जीवों को बन्धन मुक्त कर देना चाहिए। यदि वाहनों में यात्रा कर रहे हो तो वाहन को रोककर उतर कर एक ओर खुले में खड़े हो जाना चाहिए। ये उपाय इसलिए किए जाने सम्भव हैं कि तीव्र भूकम्प आने से पहले कुछ समय तक हल्के झटके लगते हैं जिससे मानव को भूकम्प आने का आभास हो जाता है।

संकट की घड़ी में व्यक्ति को एकता का परिचय देना आवश्यक हो जाता है। जाति, धर्म व सम्प्रदाय के बन्धनों से मुक्त होकर

मानवीय संवेदना के कारण मुक्त हस्त से तन-मन-धन से सहायता करनी चाहिए। इससे मानवीय सम्बन्ध और प्रगाढ़ होते हैं। भारत में जब कभी भी ऐसी प्राकृतिक आपदा आई है, देश के नागरिकों, स्वयंसेवी संगठनों, संस्थाओं, विद्यार्थियों आदि ने मिलकर पीड़ितों की सहायता करने का अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किया है।

भूस्खलन

मिट्टी तथा चट्टानों का ढलान पर ऊपर से नीचे की ओर खिसकने, लुढ़कने तथा गिरने की प्रक्रिया को भूस्खलन कहते हैं। भूस्खलन यदि बहुत बड़े परिमाण में होता है तो उस क्षेत्र में गड़गड़ाहट की आवाज धीरे-धीरे शुरू होती है बाद में तेज आवाज के साथ मलवा नीचे की ओर गिरता है।

भूस्खलन – कारण

भूस्खलन के लिए किसी एक कारक को उत्तरदायी नहीं माना जाता है अपितु कई कारक मिलकर भूस्खलन जैसी आपदा को जन्म देते हैं। भूस्खलन के लिए उत्तरदायी कारकों को दो वर्गों में रखा गया है।

1. प्राकृतिक कारक – इसमें चट्टानों की संरचना, भूमि का ढाल, चट्टानों में वलन व भ्रंशन, वर्षा की मात्रा व वनस्पति का आवरण आदि कारक प्रमुख हैं। नवीन मोड़दार पर्वतीय क्षेत्रों में भूस्खलन अधिक होते हैं क्योंकि वहाँ उत्थान की सतत् प्रक्रिया के कारण चट्टानों के जोड़ कमजोर होते रहते हैं व ढाल भी अधिक होता है। ऐसे में यदि वर्षा तीव्र हो जाये जो वह स्नेहन का काम करती है। कमजोर जोड़ों पर से चट्टानें नीचे की ओर खिसकने लगती हैं व वर्षा जल की मात्रा बढ़ने पर फिसल कर नीचे गिरती हैं। गुरुत्वाकर्षण बल इसमें और सहयोग करता है। जहाँ ढाल तीव्र होता है वहाँ गुरुत्वाकर्षण बल और बढ़ जाता है। जो ढाल 45° से अधिक कोण के होते हैं वहाँ भूस्खलन अधिक तीव्र होता है। पश्चिमी घाट में कोंकण रेल मार्ग पर वर्षा ऋतु में भूस्खलन इसीलिए अधिक होता है। पर्वतीय क्षेत्रों में नदी की अपरदन शक्ति अधिक होती है। नदी किनारों पर अपरदन से उनके ऊपरी क्षेत्र में भूस्खलन होता है।

2. मानवीय कारक – भूस्खलन जैसी प्राकृतिक आपदा को मानव ने अनियंत्रित विकास के कारण और अधिक बढ़ा दिया है। कागज व इमारती लकड़ी के लिए वनों का अतिदोहन किया है। इस वन विनाश से चट्टानों व मिट्टियों पर वृक्षों की जड़ें अपनी मजबूत पकड़ को छोड़ देती हैं, अतः मृदा अपरदन प्रारम्भ हो जाता है। यही मृदा अपरदन धीरे-धीरे भूस्खलन का रूप ले लेता है। सड़कें, रेल मार्ग, सुरंगों के निर्माण तथा खनन के रूप में मानव भूस्खलन को बढ़ावा देता है। पर्वतीय क्षेत्रों में

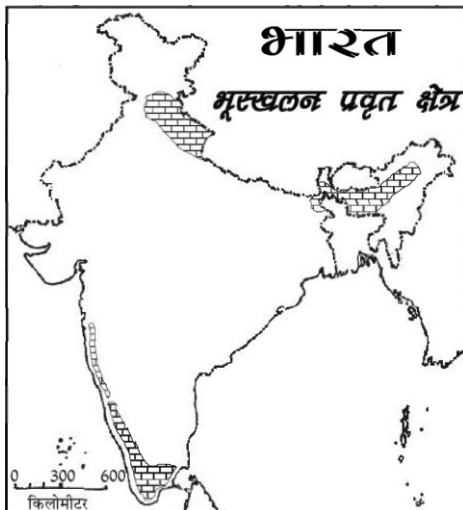
आवागमन मार्गों के निर्माण में पर्वतों पर से वनों व मिट्टी की बहुत बड़ी मात्रा को हटाया जाता है। यह पदार्थ नीचे की ओर सरक कर भूस्खलन की मात्रा को बढ़ाते हैं।

भूस्खलन प्रवृत्त क्षेत्र

भारत में भूस्खलन हिमालय क्षेत्र में अधिक होता है। इसके बाद पश्चिमी घाट क्षेत्र हैं। इन क्षेत्रों में जहाँ नदियों के प्रवाहित क्षेत्र है वहाँ भूस्खलन अधिक होते हैं। पूर्वोत्तर भारत व जम्मू-कश्मीर क्षेत्र में जहाँ नई सड़कों का निर्माण कार्य हुआ है उन क्षेत्रों में भी भूस्खलन अधिक होते हैं। समुद्री किनारों पर सागरीय लहरों के अपरदन के कारण भी भूस्खलन होते हैं। कोंकण तट पर इसके प्रमाण देखे जा सकते हैं। भारत में भूस्खलन प्रवृत्त क्षेत्रों को चित्र संख्या 10.2 में दर्शाया गया है।

भूस्खलन - एक संकट

भूस्खलन भूकम्प की तरह महाविनाशकारी आपदा नहीं है लेकिन जब कभी भी भूस्खलन होता है तो वह विनाश तो करता ही है। कहीं यह नदियों के मार्ग अवरुद्ध कर देता है तो कहीं आवागमन के मार्गों को अवरुद्ध कर देता है। मार्ग अवरुद्ध होने से जनजीवन अस्त-व्यस्त हो जाता है। मांग व पूर्ति का संतुलन बिगड़ जाता है। अतः



भूस्खलन होते ही पहले मार्ग को खोला जाता है ताकि आवागमन के अवरुद्ध होने से जो संकट खड़े हुए हैं उन्हें दूर किया जा सके।

जब कभी भूस्खलन आबादी वाले क्षेत्रों में होता है तो

उससे जन व धन दोनों की हानि होती है। लोग मकान के मलबे के ढेर में दब जाते हैं। 1993 में नीलगिरि की पहाड़ियों पर हुए भूस्खलनों में 40 लोग मारे गए थे। सड़कें टूट गई थी व कई मकान ढह गए थे। इसी वर्ष उत्तरांचल में भी भूस्खलनों से भारी जन-धन की हानि हुई थी।

कई बार भूस्खलनों से नदियों के मार्ग अवरुद्ध हो जाते हैं तथा वहाँ अस्थायी झील बन जाती है। यह झील जब कभी टूटती है तो बाढ़ से

जन-धन की हानि होती है। 1971 में भारी भूस्खलन से अलकनंदा नदी (उत्तरांचल) पर अस्थाई झील बन गई थी। उसके टूटने से बेलाकुची गाँव पूरा का पूरा बह गया था। भारत में हो चुके प्रमुख भूस्खलनों व उनके प्रभाव को सारणी-10.1 में दर्शाया गया है।

सारणी - 10.2

भारत में होने वाले भयंकर भूस्खलन

क्र.	वर्ष	स्थान	प्रभाव
1.	1971	अलकनंदा (उत्तरांचल)	भूस्खलन से अस्थायी बांध बन गया। इसके टूटने से कई गाँव क्षतिग्रस्त।
2.	1993	रतिघाट (उत्तरांचल)	मूसलाधार वर्षा के बाद भूस्खलन। एक सप्ताह तक नैनीताल क्षेत्र के गाँव बाहरी दुनिया से कटे रहे, सड़कें क्षतिग्रस्त।
3.	1993	नीलगिरी की पहाड़ियाँ (तमिलनाडु)	मूसलाधार वर्षा के बाद भूस्खलन। लगभग 40 लोग मारे गए। सड़कें व मकान क्षतिग्रस्त।

भूस्खलन व प्रबन्धन

1. सरकारी व सामाजिक स्तर पर - भारत में होने वाले भूस्खलनों का अध्ययन करने पर एक बात स्पष्ट है कि 90 प्रतिशत से अधिक भूस्खलन वर्षा ऋतु में होते हैं। अतः पर्वतीय क्षेत्रों में जहाँ कहीं भी परिवहन मार्गों का निर्माण हुआ है, उन मार्गों के दोनों ओर वर्षा जल निकास की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। मार्गों के निर्माण के दोनों ओर 45° के कोण तक के मलबे को निर्माण के दौरान ही हटा देना चाहिए। यदि हटाना सम्भव न हो तो मजबूत दीवार बनाकर चट्टानों को सहारा दे दिया जाये। गाँवों की बसावट भूस्खलन से निरापद क्षेत्रों में की जाये। यातायात मार्गों पर भूस्खलन क्षेत्र के चेतावनी संकेत लगाये जाये।

2. व्यक्तिगत स्तर पर - स्वयं के वाहनों पर जाते समय यदि भूस्खलन सम्भावित क्षेत्र में वर्षा प्रारम्भ हो गई हो तो वाहन को एक किनारे पर रोक दिया जाये। पर्वतीय क्षेत्रों में मकान मजबूत धरातल पर बनाए जाए।